© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 02 | April _ June 2017

लोकगीत का उदगम , परिभाषा एवं महत्तव

डॉ. राम मेहर सिंह,एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग छोटूराम किसान स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, जीन्द।

ISSN : 2348-5612 © URR

लोकगीतों का उद्गम, परिभाषा एवं महत्व :-

गीत की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए महादेवी वर्मा ने लिखा है - '' सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था का विशेषकर गिने-चुने शब्दों मे स्वरसाधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है।'' इस परिभाषा से स्पष्ट है कि जब मानव कभी भी स्वानुभूति से प्रेरित होकर दुख तथा सुख संवदेना से आन्दोलित हुआ होगा, तभी गीतों के अजान स्वर उसके अधरों पर लरज उठे होगे! मानव के में चाहे वह सभ्य हो या असभ्य अपनी स्वानुभूति को अभिव्यक्त करने की इच्छा और क्षमता अवश्य रहती है और जब उसकी रागात्मक प्रवृत्ति लयबद्व होकर निकलती है तभी गीत का रूप में जो भावनाएँ गीतबद्ध होकर अभिव्यक्त होती है, उन्हें लोकगीत कहते हैं। आदि मानव के हृदय से जो विकृत भावनाएँ निसृत हुई थीं वे ही आगे चलकर लोकगीत के रूप समें परिवर्तित हो गई। जब जन -जीवन के भाव अभिव्यक्त होकर अंकित हो जाते हैं तो उनमें वहाँ की मिट्टी बोलने लगती है, खेल गुनगुनाने लगते है और गालियारे तथा आँगन नाच उठते है। इन ''गीतों के प्रारम्भ के प्रति एक सम्भावना हमारे पास है, पर उसके अन्त की कोई कल्पना नहीं। यह वह बड़ी धारा है, जिसमें अनेक छोटी-मोटी धाराओं ने मिल कर उसे सागर की तरह गम्भीर बना दिया है। सदियों के घात-प्रतिघातों ने उसमें आश्रय पाया है। मन की विभित्र स्थितियों ने उसमें अपने मन के ताने-बाने बुने हैं। स्त्री-पुरूष ने थक कर इसके माधुर्य में अपनी थकान मिटाई है। इसकी ध्वनि में बालक सोये हैं, जवानों में प्रेम की मस्ती आई है, बूढों ने मन बहलाए है, वैरागियों ने उपदेशों का पान कराया है, विरही युवकों ने मन की कसक मिटाई है, विधवाओं ने अपने एकांगी जीवन में रस पाया है, पथिकों ने थकावटें दूर की है, किसानों ने अपने बड़े-बड़े खेत जात हैं, मजदूरों ने विशाल भवनों पर पत्थर चढ़ाये हैं और मौजियों ने चुटकुले छोड़े है।''

ये गीत किसी व्यक्ति द्वारा रचित नहीं होते और न ही ये सामान्य जन-मानस की अज्ञात सृष्टि है। फिर ये गीत कहाँ से आते हैं। इस पर श्री देवेन्द्र सत्यार्थी का विचार द्रष्टव्य है- कहाँ से आते है इतने गीत? स्मरण-विस्मरण की आँख-मिचौनी से। कुछ अट्हास से। कुछ उदास हृदय से । कहाँ से आते है इतने गीत? जीवन के खेत में उगते है ये सब गीत। कल्पना भी अपना काम करती है, रसवृत्ति और भावना भी, नृत्य का हिलोरा भी- पर ये सब है खाद। जीवन के सुख, जीवन के दु:ख, ये है लोकगीत के बीज ।।'' (3)

आदिकाल में जब सामाजिक चेतना का विकास हो रहा था ऐसे गीतों का जन्म हुआ जिसका सम्बन्ध जीवन से था। धीर-धीरे मानव प्रकृति पर विजय पाने लगा अत: उसके गीतों में विजय का उल्लास अभिव्यक्त होनग लगा। परन्तु मानव प्रकृति के विकराल रूप से परास्त हुआ और उसका सामना करने का साहस उसमें कालान्तर में उत्पन्न हुआ। तब उसने संगठन का मूल्य जाना और सामाजिकता की आवश्यकता समझी। यही कारण है। कि आदिकाल के गीतों में मानव की सामूहिक भावनाएँ अभिव्यक्त हुई हैं। विभिन्न ऋतुएँ एवं उत्सवों पर गाए जाने वाले गीत मानव के सामूहिक श्रम, उल्लास एवं संघर्ष की कथाएँ ही हैं।

लोकगीत: परिभाषा :-

लोकवार्ता-साहित्य के पश्चात्य तथा भारतीय विवेचनकर्त्ताओं ने लोकगीत की विभिन्न परिभाषाएँ दी है। पाश्चात्य विचारकों की परिभाषाएँ इस प्रकार है।

(1) ष । विसा`वदह बवउचवेमे पजेमसष. ळतपउउ (4)

(लोकगीत तो स्वत: जन्मा है।)

(2) श जीपे चतपउपजपअम चवदजंदमवने उनेपब ीं इममद बंससमक विसा . वदहण ष (5)

(आदिमानव के उल्लासमय संगीत को ही लोकगीत कहते है।)

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 02 | April _ June 2017

(3) ष । विसा `वदह पे दमपजीमत दमू दवत वसक ए पज पे सपाम ˙ वितमेज जतमम ूपजी पजे तववजे कममचसल इनतपमक पद जीम चेंजए इनज ूपबी बवदजपदनंससल चनजे वितजी दमू इतंदबीमेए दमू तिनपजेण ष .

त्ंसचीए टण ॅपससपंउेण (6)

(लोकगीत न तो नया होता है और पुराना। वह जंगल के एक वृक्ष के समान है जिसकी जड़े भूतकाल की जमीन में गहरी धँसी हुई है, परन्तु जिसमें निरन्तर नई-नई डालियाँ, पल्लव और फल उगते रहते हैं।)

भारतीय विचारकों परिभाषाएँ :-

(1) ष प्जे `ममक सपमे पद बवउउनदपजल `पदहपदहष

. कंअमदकतं ैजलंतजीपण (7)

(लोकगीतों का मूल जातीय संगीत में है।)

(2) ष । विसा वदह पे ``चवदजंदमवने वनज.सिवू वि जीम सपमि वि जीम चमवचसम ूव सपअम पद ˙ उवतम वत समे चतपउपजपअम बवदकपजपवदेण ष .

ज्ञण्ठण् केंण (8)

(लोकगीत उन लोगों के जीवन का स्वतोद्‌गीर्ण प्रवाह है जो आदिम अवस्था में जीवन बिताते है।)

(3) ''लोकगीत किसी संस्कृति के मुँह बोलते चित्र है ।''

- वासुदेवशरण अग्रवाल । (9)

(4) '' लोकगीत विद्यादेवी के बौद्धिक उद्यान के कृत्रिम फूल नहीं। वे मानो अकृत्रिम निसर्ग के श्वास-प्रश्वास हैं। सहजानन्द में से उत्पन्न होने वाली श्रुति मनाहरत्व से सच्विदानन्द में विलीन हो जाने वाली आनन्दमयो गुफाएँ है।''

- डा0 सदाशिवकृष्ण फडके। (10)

(5) '' आदिम मनुष्य-हृदय के ज्ञानों का नाम लोकगीत है। मानव जीवन की, उसके उल्लास की, उसकी उमंगो की, उसकी करूणा की, उसके रूदन की, उसके समस्त सुख-दुख की ....कहानी इनमें चित्रित है।''

- सूर्य किरण पारीक व नरोत्तम स्वामी । (11)

(6) ''ग्रामग्रीत प्रकृति के उद्‌गार हैं। इनमें अंलकार नहीं केवल रस है! छन्द नहीं, केवल लय है !! लालित्य नहीं, केवल माधुर्य है !!! ग्रामीण मनुष्य के स्त्री-पुरूषों के मध्य में हृदय नामक आसन पर बैठकर प्रकृति गान करती है। प्रकृति के वे ही गान ग्रामगीत है।''

- रामनरेश त्रिपाठी । (12)

(7) '' लोकगीतों के निर्माता प्रायः अपना नाम अव्यक्त रखते हैं और कुछ में वह व्यक्त भी रखता है। वे लोकभावना में अपने भाव मिला देते है। लोकगीतों में होता तो निजीपन ही है। किन्तु उनमें साधारणीकरण एवं सामान्यता कुछ अधिक रहती है। '' -बाबू गुलाबराय। (13)

(8) '' सामान्य लोकजीवन की पार्श्वभूमि में अचिन्त्यरूप से अनायास ही फूट पड़ने वाले मनोभावों की लयात्मक अभिव्यक्ति कहलाती है।''- डा0 चिन्तामणि उपाध्याय । (14)

(9) '' ग्रामगीत सम्भवत : वह जातीय आशुकवित्व है, जो कर्म या क्रीड़ा के तालपर रचा गया है। गीत का उपयोग जीवन के महत्वपूर्ण समाधान के अतिरिक्त मनोंरजन भी है।'' - सुधांशु। (15)

(10) '' ग्रामगीत ओंयतर सभ्यता के वेद है।'' (16)

(11) ''लोकगीत मानवीय कृतित्व की वह सामान्य धरोहर है जो विश्व-मानव की भूमि पर प्राप्त हुई है।'' - डा0 सत्येन्द्र (17)

(12) '' लोकगीतों में संगीत एवं काव्य का सम्मिश्रण होता है।''

- कोमल कोठारी । (18)

(13) '' लोकगीत हमारे जीवन -विकास के इतिहास है।''

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 02 | April _ June 2017

- डा0 तेजनारायणलाल। (19)

(14) '' लोकगीत स्वत: स्फुररणा की देन है।'' - बद्रीप्रसाद पंचौली। (20)

(15) लोकगीत रस में सने हुए है। - मोहनकृष्ण दर । (21)

(16) '' लोकगीत मानव-हृदय की प्रकृत भावनाओं की तन्मयता की तीव्रतम अवस्था की गति है, जो स्वर और ताल को प्रधानता न देकर लय या धुन-प्रधान होते है।'

- शान्ति अवस्थी। (22)

(17) '' लोकगीत सर्व-सामान्य की बहुश्रुत परम्परा के स्वत: स्फूर्जित उद्‌गार है।'' तथा ''लोकगीत कवि की परोक्षानुभूतिपरक दृष्टिकोण से सहज रूप में उद्‌भूत संगीतात्मक शब्द-योजना को कहा जा सकता ह।'' - डा0 चन्द्रशेखर भट् (23)

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं-

(1) लोकगीतों में लोकजीवन की विभिन्न रागात्मक वृत्तियों की अभिव्यक्ति होती है। (2) इस अभिव्यक्ति के लिए जिस शैली का आश्रय लिया जाता है वह लयात्मक होती है।

(3) लोकगीत मानव-सभ्यता और संस्कृति के विकास पर प्रकाश डालते है।

(4) लोकगीत स्वत: स्फुर्जित रससिक्त उद्‌गार हैं।

(5) लोकगीत अनादिकाल से सामूहिक भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति करता चला जा रहा है।

(6) इन गीतों में व्यक्त- विशेष की रचनाएँ भी सामूहिक भावनाओं में ढ़लकर सामान्य हो जाती है अत: सामूहिक प्रवृति अधिक व्यापक है।

(7) लोकगीत लोकानुरंजन के साथ मानवीय कर्मों के प्रेरणा स्त्रोत हैं। अत: हमारी दृष्टि से लोकसंस्कृति, लोकविश्वास एवं लोकपरम्परा की रक्षा एवं निर्वाह करते हुए लोकजीवन अपनी रागात्मक-प्रवृत्तियों की तत्स्फूर्त लयात्मक अभिव्यक्ति जिस माध्यम से करता है उसे लोकगीत कहते है। लोकगीतों के लक्षण तथा उपलक्षण पर विचार करते हुए डा0 तेजनारायण लाल ने इस प्रकार लिखा है। (24)

लोकगीतों के लक्षण : विशेषताएँ :-

(1) लोकगीत कोई विशेष गीतकार नहीं होता। वह सामूहिक रचना होती है। जब तक कोई रचना लिपिबद्ध नहीं होती तब तक लेखक का महत्त्व नहीं होता है और वह रचना परिवर्तित होती रहीत है।

(2) लोकगीत का कोई परिणत स्वरूप नहीं है। कविता की भाँति वह ज्यों का त्यों नहीं रहता, बल्कि बदलता रहता ह।

(3) प्रत्येक लोकगीत का ठीक रचनाकाल मालूम नहीं हो पाता है, बाद में पद भी उसमें जुड़ जाते हैं।

(4) लोकगीतों का मौलिक प्रचार ही अधिकतर होता हैं। संभवत: वेद को लिखकर पढ़ते तो स्वरभंग हो जाता और अर्यभंग भी। इसी से उसे 'श्रुति' कहते है। वेदों और लोकगीतों में यह बड़ी समानता है। वेद भी लिखित नहीं आया और न लोकगीत ही।

(5) लोकगीतों की शैली सहज होती है। सभी लोकगीत गाने योग्य होते है। कविता भी गेय होती है, लेकिन सामूहिक रूप से जब उसे गाते है तो गेयता का निवाह करना कठिना हो जाता है।

लोकगीतों के उपलक्षण :-

(1) आशु रचना : लोकगीतों की रचना अति भावावेग में होती है। अपने आप मुँह से स्वर -लहरी फूट पड़ती है। जो गाया वही गीत बन गया।

(2) पुनरावृत्ति : लोकगीतों में कहीं न कहीं एक टेक होती है। एक पंक्ति जो पहली आती है वह प्राय: पत्येक कड़ी में दुहरायी जाती है।

(3) परिचित वस्तुओं का प्रयोग : तत्कालीन समाज में जिस विषय को प्रत्येक व्यक्ति जानता रहता है उसका ही विशेष उल्लेख लोकगीतों में होता है। फ्रेंच विद्वान मोशिए आँयरे के अनुसार लोकगीतों के लक्षण निम्नलिखित है। (25)

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 02 | April _ June 2017

(1) अन्त्यानुप्रास के स्थान पर ध्वनिसाम्य का प्रयोग,

(2) पुनरूक्ति (कथोपकथन में),

(3) तीन, पाँच, सात आदि संख्याओं का बराबर प्रयोग तथा

(4) दैनिक व्यवहार की वस्तुओं को सोने रूपे की कहना।

डा0 यदुनाथ सरकार ने लोकगीत की विशेषताएं निम्न शब्दों में व्यक्त की है- ''प्रबन्ध की द्रुतगति, शब्द-विन्यास की सादगी, विश्व-व्यापक मर्मस्पशी प्राकृतिक और आदिम मनोराग, सूक्ष्म किन्तु प्रभावोत्पादक चरित्र-चित्रण, क्रीड़ास्थली अथवा देशकाल का स्थूल अंकन, साहित्यिक कृत्रिमताओं का न्यूनातिन्यून का प्रयोग या सर्वथा बहिष्कार-सच्चे लोकगीत की ये नितान्त आवश्यक विशेषताएँ है।''

लोकगीतों के प्रकृत स्वरूप एवं सामान्य लक्षणों पर विचार करते हुए डा0 चिन्तामणि उपाध्याय ने उसकी निम्नलिखित विशेषताएँ गिनाई है। (26)

(1) निरर्थक शब्दों का प्रयोग (2) पुनरावृत्तियाँ (3) प्रश्नोत्तर प्रणाली (4) टेक (गीत की आधार भूत लयबद्ध पंक्तियाँ)

संक्षेप में लोकगीतों की विशेषताएँ इस प्रकार है।

(1) गीतकार अज्ञात :- लोकगीत का कोई रचयिता नहीं होता। उसे मिली व्यक्ति की रचना नहीं कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त लिपिबद्ध होने पर तो लेखक का महत्त्व होता है परन्तु लोकगीत मौखिक हाते है लिपिबद्ध नहीं होते। अत: इसमें परिवर्तन होता रहता है।

(2) सामूहिक भावभूमि:- लोकगीतों को समूह द्वारा निर्मित माना जाता है। अत:
इसमें एक सामूहिक भावभूमि तथा समूह के सामाजिक मूल्यों को अभिव्यक्त करने की शक्ति है। ये गीत सामूहिक रूप से ही गाए जाते हं। परन्तु एक बात यहाँ कहनी है। जैसा माना जाता है कि लोकगीतों का निर्माण लोकसमूह द्वारा होता है। ऐसा नहीं होता । रचना तो व्यक्ति ही करता है परन्तु उसका तादाम्य लोक से ऐसा हो जाता है कि न तो निर्माण के समय का पता लगता है और न उसके प्रचार एवं प्रसार का होता यह है कि एक व्यक्ति आरम्भ करता है और दूसरा-तीसरा उसमें कोई न कोई कड़ी जोड़ता चला जाता है। ये कड़ियाँ ही मूल गीत बनकर लोकपरम्परा में चल पड़ती है।

(3) सहजता एवं अकृत्रिमता :- लोकगीत सहज और अकृत्रिम होते है। ये गीत सामूहिक चेतना और लोकभावना पर आधारित होते है। इनकी अभिव्यक्ति का आधार सरलता और सहजता है। यहाँ किसी प्रकार के बन्धनों के लिए कोई स्थान नहीं ।

(4) मौखिक परम्परा :- लोकगीतों की परम्परा मौखिक ही नहीं है ये गीत ग्रामीणों के होठों पर बिखरे पड़े है। हर विषय, हर भाव तथा हर समय का गीत यहाँ उपलब्ध है। वास्तव में शिक्षा मौखिक साहित्य की शत्रु है। शिक्षा प्राप्त कर व्यक्ति अपनी परम्परा को हेय समझने लगता है। यही कारण है कि लोकगीत लुप्त होते जा रहे हैं। इनके सरंक्षण और प्रसार की ओर हमें ध्यान देना चाहिए।

(5) नाम जोड़ने की पवृत्ति :- लोकगीतों में दैनिक व्यवहार की वस्तुओं के नाम बार-बार आते हैं। तत्कालीन समाज में जिस विषय को प्रत्येक व्यक्ति जानता रहता है, तथा जिस क्षेत्र का वह है, उसका ही उल्लेख इन गीतों में आता हैं परम्परागत गीतों में कुछ नाम बार-बार आतें है। नए नामों का आना भी स्वाभाविक ही है।

(6) प्रश्नोत्तर प्रवृति :- सीधे प्रश्न-सीधे उत्तर! यह सादगी सहज सामजिक भावना से सम्बन्धित है।

(7) संख्या :- लोकगीतों में संख्यापरक शब्दों का प्रयोग बार-बार होता है। तीन, पाँच, आठ, नौ, छत्तीस, सौ आदि संख्याओं का उल्लेख इन गीतों में कई स्थानों पर हुआ है।

(8) प्रतीक्षा करना :- जब लोग गाँव में रहते थे तो अपने प्रवासी प्रेमी की बाट अटारी पर चढ़ कर ही देखते थे। दूर की वस्तुओं को पेड़ पर, पहाड़ पर, अटारी पर चढ़कर देखा जा सकता है।

(9) संगीत एवं लय :- लोकगीत गेय होते है। लय के साथ गाने योग्य होते है। लय और संगीत के बिना लोकगीत अधूरा है।

(10) पुनरावृत्ति :- लोकगीत में टेक होती है। पहली पंक्ति प्राय: प्रत्येक कड़ी में
दुहराई जाती है।

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 02 | April _ June 2017

(11) स्वच्छन्दता :- लोकगीत किसी निर्धारित बन्धन में बँधा नहीं होता। सामूहिक चेतना और लोकभावना पर आधारित गीतों में छन्दादि की रूढ़ियत परम्परा को लेकर चलना संभव नहीं । उन्मुक्त वातावरण लोकगीतों के लिए आवश्यक है। जहाँ लोकभावना सभ्यता के आडम्बरयुक्त बन्धनों को तोड़ देती है वहाँ अभिव्यक्ति स्वच्छन्द होती है। इस सम्बन्ध में डा0 सदाशिव फडके का कथन सहो है- ''शास्त्रीय नियमों की विशेष परवाह न करके सामान्य लोकव्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपने आनन्द-तरंग में जो छन्दोबद्ध वाणी सहज उद्‌भूत करता है, वही लोकगीत है।'' (27)

(12) उपदेशात्मकता :- अधिकांश लोकगीतों के अन्त में एक उपदेश देने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

(13) रससृष्टि :- भारतीय लोकगीतों में अत्यधिक रसात्मकता पाई जाती है। यही कारण है कि आज के सभ्य समाज के हृदयों को कंपित करने की शक्ति उसमें है। लोकगीतों का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। मानव जीवन के मूल भावों को सरलतम रूप में अभिव्यक्त करने की शक्ति इन लोकगीतों में है। केवल दो पंक्तियों में जीवन के विविध पक्षों को कवित्वपूर्ण तथा आंलकारिक ढंग से कहने की शक्ति नहीं लोकगीतों में है। ये स्वत: स्फूर्त
प्राकृतिक काव्य के अंग हैं इनमें रसोद्‌बोधन की अपार शक्ति एवं सरल सौंदर्य को अभिव्यक्त करने कीक्षमता है। इनमें लोकहृदय की अनुभूति अधिक खुलकर सामने आती है। गेयता इनका प्रधान गुण है। '' अनुभूति की मार्मिकता तथा अभिव्यक्त के सरल, स्पष्ट, किन्तु तीव्र होने के कारण अनेक गीतों में अंशत: काव्य के गुण स्वाभाविक रूप से इसमें आ जाते है। किन्तु प्राथमिक संस्कृतियों के निम्न धरातल पर जीवन यापन करने वाले अनेक आदिवासी समूहों के गीतों के सम्बन्ध में ऐसा नहीं कहा जा सकता। हैदराबाद दक्षिण की चेंचू आदि के अध्ययन में क्रिस्टोफ फॉन फ्यूरर-हैमण्डार्क ने बतलाया है कि इन लोगों के गीत प्राय: अस्पष्ट उद्‌गार ही होते है। उनमें काव्यात्मक अभिव्यक्ति का अभाव रहता है। आसाम की कोन्यक नागा आदि जाति के गीत सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होते हए भी कवित्व की दृष्टि से प्राय: उपेक्षणीय ही है। परन्तु अनेक भारतीय आदि जातियाँ ऐसी भी है जिनके लोकगीत कविता की दृष्टि से समृद्ध है। वरियर एलथिन और शामशव हिवाले द्वारा संग्रहीत मध्यप्रदेश की आदि-समूहों के अनेक गीत कविता के रूप में भी महत्त्वपूर्ण है। ''

- कश्मीर का लोकसाहित्य -पृ0 47
- हन्दी साहित्य सम्मलेन पत्रिका- लोकसंस्कृति अंक सं0 2020 पृ0 37
- हाडौती लोकगीत - पृ0 30
- मैथिली लोकगीतों का अध्ययन - पृ0 17-18
- भारतीय लोकसाहित्य -श्याम परमार - पृ0 56
- मालवी लोकगीत -एक विवेचनात्मक अध्ययन -पृ0 12
- हिन्दी साहित्य सम्मेलन-पत्रिका-लोकसंस्कृति विशेषांक -पृ0 250
- मानव और संस्कृति -श्यामचारण दुबे - प्र0 166 - 167
- म्दबलबसवचंमकपं ठतपजंदपबं टवस ण प चंहम . 446
- भ्नउवनत पद ।उमतपबंद ैवदहे. च्तमबिम.।तजीनत स्वबबमेवत. च्ंहम 8
- कविता कौमुदी (5 वाँ भाग) - उपशीर्षक आमगीत
- हंस (फरवरी 1936)
- जीवन के तत्व और काव्य के सिद्वान्त -आठवाँ अध्याय।
- ब्रज लोकसाहित्य का अध्ययन - पृ0 46
- जनपद (त्रैमासिक) अंक 1 - पृ0 11
- जनपद (त्रैमासिक) अंक 1 - पृ0 38
- कविता-कौमुदी (5वाँ भाग)-पृ0 1
- ब्रज लोकसाहित्य का अध्ययन - प0 75 से उद्‌घृत

- वह पृ0 75
- छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का परिचय - पृ0 5
- मालवी लोकगीत - एक विवेचनात्मक अध्ययन - डा0 चिन्तामणि उपाध्याय -पृ09